UGC-CARE enlisted & Indexed in the EBSCO International Database of Journals

पाण्डुलिपि, प्रतिष्ठान और प्राचीन संगीत ग्रन्थ

लावण्य कीर्ति सिंह 'काव्या'
संकायाध्यक्ष, ललित कला संकाय
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय,
दरभंगा (बिहार)
Email: lawanyaks@gmail.com

सारांश

'पाण्डुलिपि' ऐतिहासिक ग्रन्थों का प्रामाणिक दस्तावेज है. सम्पुष्ट शोध-अध्ययन के लिए प्राचीन ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ महत्वपूर्ण सहायक सिद्ध होती हैं. आज देश-भर में अनेक प्रतिष्ठान हैं जहाँ प्राचीन बहुमूल्य ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ संरक्षित हैं. इन पाण्डुलिपियों का ग्रन्थ रूप में प्रकाशन और डिजिटलाइजेशन भी किया जा रहा है. संगीत के ये ग्रन्थ इन प्रतिष्ठानों द्वारा आज विशेष अध्ययन हेतु शोधकर्त्ताओ को उपलब्ध कराये जा रहे हैं. हमारी इस विशाल सांस्कृतिक विरासत का सर्वेक्षण, संग्रहण और संरक्षण कार्यों की उल्लेखनीय पहल उपर्युक्त प्रतिष्ठानों ने किया. इन प्रतिष्ठानों ने अपने उद्देश्यों की पूर्ति करने का निरन्तर प्रयास किया है. अनेक अलग-अलग स्थानों से अथवा दान में प्राप्त पाण्डुलिपियों को उपचार द्वारा संरक्षित करना और इनके सर्वेक्षण, संरक्षण, सम्पादन, प्रकाशन के बाद योग्य अकादमिक संस्थानों तथा शोध-जिज्ञासुओं तक लक्ष्यपूर्ति हेतु उपलब्ध कराना इन प्रतिष्ठानों का उद्देश्य बन गया, जिससे भावी शोध में भरपूर सहायता प्राप्त हो सके. किसी भी अन्वेषण में ग्रन्थों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है. प्रामाणिकता के लिए अनेक ग्रन्थों से तथ्यात्मक सामग्री एकत्र कर ही अध्ययन किया जा सकता है. भ्रामक तथ्यों को उजागर करने के लिए इन पाण्डुलिपियों और ग्रन्थों के अध्ययन के उपरान्त सही तथ्यों तक पहुँचा जा सकता है. इसके लिए आवश्यक है कि ग्रन्थों की उपलब्धता हेतु उनके मूल-प्राप्ति-स्थान को भी जानें.

अतः प्रस्तुत शोध पत्र में भारत के विभिन्न संग्रहालयों, संस्थानों आदि में संग्रहीत संगीत की पांडुलिपियों की उनके प्रकाशन सहित चर्चा की जा रही है. शोध पत्र में सर्वे विधि द्वारा प्राथमिक तथ्यों का संग्रह किया गया है.

मुख्य शब्द: पाण्डुलिपि, हस्तलेख, लिपि, संगीत, प्रतिष्ठान, ग्रन्थ.

पाण्डुलिपियों के अध्ययन और संरक्षण के लिए पाण्डुलिपि-विज्ञान (Manuscriptology) का अध्ययन आवश्यक है. पाण्डुलिपि-विज्ञान 'पुरातत्त्वशास्त्र' की एक शाखा है जो प्राचीन ताल-पत्र और कागज पर लिखे पाण्डुलिपियों, पुरालेखविद्या (Epigraphy) और जल के भीतर के पुरातत्त्व का अध्ययन है.

पूरे भारत में लगभग पचास लाख पाण्डुलिपियाँ हैं. मात्र राजस्थान में साढ़े सात लाख हैं. जयपुर के जैन मन्दिरों में 25,000 पाण्डुलिपियाँ हैं. जयपुर के जैन विद्या मन्दिर के पास 6,000 पाण्डुलिपियाँ हैं. ये पाण्डुलिपियाँ

कहीं ताड़ - पत्रों पर हैं तो कहीं कपड़े पर या कागज के टुकड़ों पर. पाण्डुलिपियाँ अनेक भाषाओं तथा लिपियों में पायी जाती हैं, यथा - नेवारी, गौड़ी, तिब्बती, कन्नड़, नाख आदि.

पाण्डुलिपि कहने से तो प्रथम दृष्टया ऐसा प्रतीत होता है जैसे यह किसी लिपि विशेष का नाम या प्रकार हो. यद्यपि पाण्डुलिपि शब्द बहुत प्राचीन नहीं है. पूर्व में इसके लिए 'पाण्डुलेख' या 'हस्तलेख' प्रयुक्त होता था. किसी भी हस्तलिखित प्रारूप को यूँ भी 'पाण्डुलिपि' संज्ञा दिया जाना उचित नहीं प्रतीत होता है, 'पाण्डुलेख' ही उपयुक्त जान पड़ता है.'लिपि' के लिए प्रयुक्त शब्दार्थ अंग्रेजी मेंscript है, जिसका अभिप्राय उत्कीर्णन अथवा चित्रण है. मनोभावों को व्यक्त करने अथवा उत्कीर्ण करने के लिए प्राचीन काल में दीवारों पर चित्र रचे जाते थे. धीरे-धीरे भाषाओं की ओर मानव जाति आकर्षित हुई और ये सांकेतिक चित्र ही भाषाओं की लिपि-चिह्न बनते गए. हिन्दी के तत्सम शब्द 'पाण्डुलिपि' में 'पाण्डु' का अर्थ पीला, सफेद अथवा पीली छाया युक्त सफेदी है.'लिपि' शब्द संस्कृत के 'लिप्' धातु से बना है जिसका भावार्थ लेपना, पोतना, आच्छादन करना, प्रज्ज्वलित करना आदि है. परवर्ती विकास के क्रम में 'लिप्त', 'संलिप्त' आदि शब्द इसी कड़ी में आए. ध्यातव्य है कि हवन-पूजन आदि से पूर्व भूमि-लेपन की परम्परा आज भी है. किसी भी सतह को सफेदी से पोत कर लिखने का भाव ही पाण्डुलिपि में है[1]. ऋषि-मुनियों द्वारा मीमांसा अथवा विचारों को भी भूमि को गोबर से पोत कर खड़िया मिट्टी से लिपिबद्ध किए जाने का प्रसंग प्राप्त होता है. धीरे-धीरे इसका स्थान लकड़ी की पट्टियों ने ले लिया. इसके बाद ताड़-पत्र का उपयोग किया जाने लगा. इनमें भी पुस्तकाकार प्रारूप ही 'पाण्डुलिपि' कहलाया. कागज का युग आने पर भी हस्तलिखित प्रारूप को ही 'पाण्डुलिपि' कहा जाता रहा है[2]. इसे 'मातृकाग्रन्थ' भी कहा गया है.

अर्थात् 'पाण्डुलिपि', 'पाण्डुलेख'अथवा 'मातृकाग्रन्थ' एक हस्तलिखित ग्रन्थ विशेष है जिसका मूल अर्थ है हाथ से लिखी गई किसी रचना का आरंभिक मसौदा या प्रारूप अर्थात् किसी पुस्तक की हस्तलिखित मूल प्रति जो मुद्रण के लिए तैयार की गयी हो.'पाण्डुलिपि' ही अंग्रेजी में manuscript है. इन लिपिग्रन्थों को संक्षेप में 'Ms' या 'Mss' कहा जाता है. किसी भी मुद्रित या मशीनी या यांत्रिक रीति से तैयार की गई सामग्री पाण्डुलिपि नहीं की जा सकती. मुद्रित पृष्ठों में संलग्न सामग्री को 'पुस्तक'कहते हैं. पुस्तक लेखनी अथवा कलम से लिखकर तैयार की जाती है. डिजिटल पुस्तकों को 'ई-बुक' कहते हैं.

ये पाण्डुलिपियाँ ऐतिहासिक दस्तावेज तो हैं ही,अनेक राष्ट्रीय स्तर की घटनाओं,परिवर्तनों की गवाह भी हैं. ये अनेक परम्पराओं, व्यवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं. इनका ऐतिहासिक वैज्ञानिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक महत्व है. इसके लिए आवश्यक है कि पाण्डुलिपियाँ लगभग पचहत्तर वर्ष पुरानी हों.

प्राचीन काल से ही मातृकाग्रन्थों अर्थात् पाण्डुलिपियों की परम्परा रही है. ये अनेक प्रकार की हैं - ताड़-पत्र, भोज-पत्र, ताम्र-पत्र, सुवर्ण-पत्र आदि. ताड़ पत्र लौह लेखनी से लिखित होते थे. आज भोज-पत्र और ताड़-पत्रों में पाण्डुलिपियाँ सर्वाधिक प्राप्त होती हैं.

चर्म-पत्र (Parchment) बकरी, बछड़ा, भेंड़ आदि के चमड़ा से बना होता है. इसको पकाया नहीं जाता था, मात्र चूनाकरण किया जाता था जिससे यह आर्द्रता के प्रति संवेदनशील है. आजकल कृत्रिम चर्म-पत्र अर्थात् वानस्पतिक चर्म-पत्र भी बनता है. ईसा के पूर्व दूसरी शताब्दी में परगामम के यूमेनीज द्वितीय ने चर्म-पत्र की प्रथा चलाई थी.

ताड़ के सूखे पत्तों पर लिखी पाण्डुलिपियाँ ताड़-पत्र या ताल-पत्र कहलाती हैं. उसका प्रयोग मुख्यतः भारत में 15वीं शताब्दी ईसा पूर्व तक मिलता है. आरंभ में मौखिक-परम्परा थी परन्तु लिपि के अविर्भाव के बाद ताल-पत्रों द्वारा ज्ञान सुरक्षित होने लगा. ताड़-पत्र को मानक आकार में काटा जाता है. इन्हें कभी-कभी रागी से बने पेस्ट को रगड़ कर नरम किया जाता है और फिर पपीरस के उपयोग के समान पूर्वजों द्वारा लेखन के लिए उपयोग किया जाता है. ताम्र-पत्र अर्थात् धातु अथवा कठोर सतह पर उत्कीर्ण की गई पाठ्य सामग्री. प्राचीन काल से ही उसका प्रयोग हो रहा है जिससे उसे देखा जा सके, पढ़ा जा सके.

भोज पत्र –'भूर्ज' नामक वृक्षों के छाल से तैयार पत्र 'भोज पत्र' कहे गए हैं. ये वृक्ष यूरोप, एशिया और उत्तरी अमेरिका में पाए जाते हैं. कहा गया है -

'जलाद्रक्षेत्तैलाद्रक्षेद्रक्षेच्छिथिलबन्धनात्.
मूर्खहस्ते न मां दद्यादिति वदति पुस्तकम्..

अर्थात् पुस्तक का कथन है कि जल से, तेल से, ढ़ीले बन्धन से मेरी रक्षा की जाय. मूर्ख के हाथों में भी मुझे नहीं दिया जाय.

भारतीय ज्ञान-परम्परा इन पाण्डुलिपियों में निहित है. मैक्समूलर ने भी कहा है-'समस्त संसार में पंडितों और ज्ञानियों का देश भारत है,जहाँ पाण्डुलिपियों में विपुल ज्ञान - सम्पदा सुरक्षित है'.

पाण्डुलिपियाँ कार्बनिक पदार्थ हैं जो क्षय के जोखिम को संचालित करती हैं.'सिल्वर फिश'नामक कीड़े द्वारा इनके नष्ट होने की संभावना होती है, उन्हें संरक्षित करने के लिए पाण्डुलिपियों पर लेमन ग्रास का तेल लगाया जाता है जो कीटनाशक की तरह काम करता है. लेमन ग्रास का तेल ताड़ के पत्तों और हाइड्रोफोबिक में प्राकृतिक तरलता बनाता है. तेल की प्रकृति पाण्डुलिपियों को सूखा रखती हैं ताकि नमी के कारण पाठ्य-सामग्री सड़ने नहीं पाए.

देश भर में अनेक प्रतिष्ठान हैं जहाँ प्राचीन संगीत-ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ संरक्षित हैं, उनमें कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं[3]:-

- राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
- महाराजा सयाजीराव ओरिएन्टल इन्स्टीच्यूट, बड़ौदा
- अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर
- एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल

- मद्रास ओरिएन्टल लाइब्रेरी, मद्रास
- तंजौर पैलेस लाइब्रेरी, तंजौर
- ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, मैसूर
- भंडारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पुणे
- खुदाबक्श ओरिएन्टल पब्लिक लाइब्रेरी, पटना
- आनन्द आश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पुणे
- मिथिला संस्कृत स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध संस्थान, दरभंगा

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान (राजस्थान ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट):

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान का मुख्यालय जोधपुर (राजस्थान) में अवस्थित है. इसके अधीन छः शाखा-कार्यालय राजस्थान के विभिन्न शहरों में भी हैं- अलवर, भरतपुर, उदयपुर, कोटा, बीकानेर और जयपुर. राजस्थान सरकार द्वारा राजस्थानी संस्कृति एवं विरासत के संरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए इसकी स्थापना 1954 में मुनि जिनविजय के मार्गदर्शन में की गई थी, मुनि जिनविजय संस्थान के संस्थापक निदेशक भी थे. वे रॉयल एशियाटिक सोसाइटी के सदस्य भी थे. पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत तथा अन्य भाषाओं की अप्रकाशित पाण्डुलिपियों तथा प्राचीन ग्रन्थों की खोज करना ही इस प्रतिष्ठान का उद्देश्य रहा. भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने इसकी आधारशिला 1955 में रखी थी तथा 14 सितम्बर 1958 को इस प्रतिष्ठान का उद्घाटन हुआ. इस प्रतिष्ठान के पास दान से प्राप्त एवं क्रय करने के उपरान्त एक लाख चौबीस हजार पाण्डुलिपियों का संग्रह है. ये पाण्डुलिपियाँ बारहवीं से बीसवीं शताब्दी तक की हैं और ये पच्चीस विषयों में समाहित हैं. यह प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों का अप्रतिम खजाना है. इस प्रतिष्ठान ने दो सौ उन्नीस ग्रन्थों का सम्पादन कर प्रकाशन भी करवाया है. संगीत के निम्नलिखित प्रकाशित ग्रन्थ हैं –

ग्रन्थ का नाम		**ग्रन्थकार**		**संख्या**
पुण्डरीक ग्रन्थावली	-	पुण्डरीक बिट्ठल	-	117
सुर तरंग	-	सरदार सिंह	-	164
नृत्यरत्न कोष, भाग - 1	-	महाराणा कुम्भकर्ण	-	24
('संगीत राज' का चतुर्थ कोष)				
नृत्यरत्न कोष, भाग - 2	-	महाराणा कुम्भकर्ण	-	25

('संगीत राज' का चतुर्थ कोष)

पाठ्य रत्नकोष	-	महाराणा कुम्भकर्ण	-	90
('संगीत राज' का प्रथम कोष)				
नृत्त संग्रह	-	अज्ञात	-	17

इस प्रतिष्ठान में एक वृहद् संग्रहालय भी है जिसमें ग्रन्थों की पाण्डुलिपियों से संबंधित महत्वपूर्ण तथ्य भी संदर्भित हैं. यहाँ अध्ययन के लिए 30,000 से अधिक पुस्तकें उपलब्ध हैं. पाण्डुलिपियों के संरक्षण के लिए वर्ष 2008 से ही डिजिटलाइजेशन और माइक्रोफिल्म का कार्य भी हो रहा है. राजस्थान ओरिएन्टल सीरीज (राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला) के अन्तर्गत संस्थान द्वारा प्रकाशन का कार्य किया जाता है जिसके अन्तर्गत सैंतीस लाख पत्रों का डिजिटलाइजेशन हो चुका है जो लगभग 45,000 ग्रन्थों के हैं. इसके बाद शोधार्थियों को कम्प्यूटर पर विशेष अध्ययन की सुविधा भी प्राप्त हो रही है. यहाँ राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ, व्याख्यानमालाओं एवं ग्रन्थों की प्रदर्शनी का भी आयोजन किया जाता है.

महाराजा सयाजिराव ओरिएन्टल इन्स्टीच्यूट (प्राच्य विद्या मन्दिर), बड़ौदा:

महाराजा सयाजिराव ओरिएन्टल इन्स्टीच्यूट की संकल्पना ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, मैसूर के उद्घाटन से प्रेरित होकर महाराजा सयाजिराव गायकवाड (III) ने 1893 में की थी जिनके पास दस हजार से अधिक पाण्डुलिपियाँ संग्रहित थीं. अंततः यह इन्स्टीच्यूट 01 सितम्बर 1927 को महाराजा सयाजिराव गायकवाड (III) द्वारा स्थापित किया गया. यहाँ 30, 211 (तीस हजार दो सौ ग्यारह) पाण्डुलिपियाँ हैं जो देवनागरी, शारदा, तेलुगू, मलयालम, उड़िया, बंगाली, पर्सियन, अरबी में हैं. ये संस्कृत भाषा के साथ-साथ गुजराती, मराठी आदि की भी हैं. यह संस्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण पाण्डुलिपि 'अयोध्या महात्म्य'के लिए सुप्रसिद्ध है जिसे 1650 ई. में हरिशंकर ने लिखा था.'बाल्मीकि रामायण' के कई संस्करणों के लिए भी यह प्रसिद्ध है. यूजीसी की पच्चीस वर्षीय लम्बी परियोजना द्वारा यह 'रामायण' प्रकाशित हुआ. प्रसिद्ध रामानंद सागर ने टी वी सीरियल 'रामायण' के लिए उसके सात संस्करणों को ही प्रयोग हेतु लिया था. श्री राम जन्मभूमि पुनरुद्धार समिति, वाराणसी द्वारा साक्ष्य के रूप में उस 354 वर्ष पुरानी पाण्डुलिपि 'अयोध्या महात्म्य' का प्रयोग किया गया. इस पाण्डुलिपि के पृ. 34 पर स्पष्ट अंकित है कि सरयू नदी के तट पर अयोध्या है जिस पर भगवान राम का आशीर्वाद है[4]. महत्वपूर्ण यह है कि यह संस्थान संगोष्ठियों का भी आयोजन करता है. इतना ही नहीं, संस्थान अंग्रेजी और गुजराती भाषा में दो शोध-पत्रिकाओं (त्रैमासिक) का भी प्रकाशन करता है - प्रथम, 'Journal of the Oriental Institute' (ISSN 0030-5324) (अंग्रेजी) और द्वितीय 'स्वाध्याय' (गुजराती).

संस्थान ने पाण्डुलिपियों का डिजिटलाइजेशन कार्य भी आरम्भ किया है. लगभग200 दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ प्रकाशित भी हो चुकी हैं.1949में यह इन्स्टीच्यूट महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा से सम्बद्ध भी हो गया.

प्राच्य विद्या मन्दिर की पाण्डुलिपियों की विवरणी निम्नानुसार है -

कुल पाण्डुलिपियाँ	-	30,211
Paper पाण्डुलिपियाँ	-	27,124
Palm पाण्डुलिपियाँ	-	3,016
Birch – Bark पाण्डुलिपियाँ	-	01
Metal पाण्डुलिपियाँ	-	04
Illustrated पाण्डुलिपियाँ	-	127
Oldest dated पाण्डुलिपियाँ	-	1220AD

अनूप संस्कृत पुस्तकालय, **बीकानेर** -

1669-1698ई0 में बीकानेर के तत्कालीन दसवें शासक महाराजा अनूप सिंह जिन्हें औरंगजेब ने औरंगाबाद का शासक नियुक्त किया था, ने अपनी संकलित पाण्डुलिपियों एवं पुस्तकों के साथ लालगढ़ पैलेस, बीकानेर में अनूप संस्कृत पुस्तकालय की स्थापना की. अनूप सिंह स्वयं विद्वान् संगीतज्ञ थे जिनके दरबार में भावभट्ट जैसे संगीतज्ञ को आश्रय प्राप्त था. इसे दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा हस्तलिखित ग्रन्थों का खजाना कहा गया है. इसमें विश्व के दुर्लभ ग्रन्थ हैं. यहाँ 29हजार से अधिक हस्तलिखित प्राचीन ग्रन्थों का भण्डार है. बीकानेर के महाराजा के पुस्तकालय में संस्कृत पाण्डुलिपियों की वृहत् सूची अनूप संस्कृत पुस्तकालय द्वारा प्रथम संस्करण 1994 में प्रकाशित हुआ. इसे C. Kunhan Raja औरK. Madhav Krishna Sharma ने तैयार किया.

एशियाटिक सोसाइटी, **बंगाल** :

सर विलियम जोन्स 25 सितम्बर 1783 को सुप्रीम कोर्ट के जज के रूप में कलकत्ता आए. वे ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के एक विद्वान् थे. सर विलियम जोन्स द्वारा ही15 जनवरी 1784 को एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की स्थापना हुई. यह पूरे एशिया महाद्वीप में शोध और अध्ययन का सर्वाधिक पुरातन केन्द्र है. संस्कृति मंत्रालय, भारत

सरकार द्वारा इसे राष्ट्रीय महत्त्व का संस्थान घोषित किया गया है. यद्यपि इसके नामकरण में परिवर्तन होता रहा है, यथा-1832-1935 तक 'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल', 1936-1951 तक 'रॉयल एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल', 1952 से 'एशियाटिक सोसाइटी'.1808 में यह पुस्तकालय अपने निजी भवन में आकर आम जनता के लिए खोला गया. इसकी सामान्य शाखा में लगभग एक लाख पुस्तकें हैं. संस्कृत शाखा में 27,000 पुस्तकें हैं. यहाँ अत्यन्त प्राचीन पाण्डुलिपियाँ हैं जो संस्कृत, अरबी, फारसी, उर्दू आदि में हैं. इसके संग्रह में कुछ दुर्लभ ग्रन्थ भी हैं, यथा - नेवारी लिपि की 'अष्टसहस्त्रिका' की पाण्डुलिपि, पवित्र 'कुरआन'की एक प्रति, अकबर द्वारा हस्ताक्षरित 'पद्म शाहनामा' की पाण्डुलिपि आदि. यहाँ की शोध पत्रिका 'The Journal of Asiatic Society' 1832 से अद्यतन नियमित प्रकाशित होती है. 1784 में एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना के बाद संस्कृत पाण्डुलिपियों के संकलन का कार्य आरम्भ हुआ. 1807 में लन्दन से ग्रन्थ-संग्रह की सूची प्रकाशित हुई जिसके मुख्य सम्पादक सर विलियम जोन्स और लेडी जोन्स थे. 1807 में ही हेनरी टामस कोलबुरुक (1767-1837) को संस्था का सभापति नियुक्त किया गया जिनके द्वारा लिखित शोधपूर्ण सूची विवरणिका आज भी लन्दन में सुरक्षित है. 1817 से 1934 तक विभिन्न ग्रन्थ-संग्रहों को प्रकाशित कराने वाले प्रमुख पं. हर प्रसाद शास्त्री थे. श्री चिन्ताहरण चक्रवर्ती द्वारा (1934-40) आठवें भाग के तथा श्री चन्द्रसेन गुप्त द्वारा दसवें भाग के सम्पादन (1945) की भी जानकारी प्राप्त होती है.

मद्रास ओरिएन्टल लाइब्रेरी (Govt. Oriental Manuscript Library (GOML), Madras)-

कॉनिल मैकेन्सी 1783 में अभियन्ताओं के एक कैडेट के रूप में भारत आए. ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना ने प्राचीन गणित और भाषाओं में बहुत योगदान दिया. मैकेन्जी ने बहुत बड़ी संख्या में पाण्डुलिपियाँ, सिक्के, मानचित्र, शिलालेख, अभिलेख इत्यादि एकत्र किए. ये संकलन भारत ही नहीं अपितु सिलॉन तथा जावा से भी थे. इसे 10,000 पाउण्ड में ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा 1821 में लिया गया था जिसके तीन भाग हुए - (1) लंदन (2) कलकत्ता और (3)मद्रास.1837 में C.P. Brown ने तमिल, तेलुगू और कन्नड़ पाण्डुलिपियों को India Office Library, London में देखा. यह Dr. Leyden द्वारा संकलित था.Dr. Leyden (1803-1888) भारत आए हुए थे. इनके देहावसान के बाद ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने इसे खरीद कर India House, London में संग्रहीत कर लिया.Indian Civil Service में योगदान के बाद C. P. Brown इस संग्रह को 1855 में भारत ले आए. इन्होंने संस्कृत और तेलुगू के पत्र-अभिलेख को ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दान दे दिया.1869 में यह स्वतंत्र रूप से पुस्तकालय के रूप में आरम्भ हुआ. इसमें तीन तरह के संग्रह हैं: (1) Mackenzie Collection, (2) Brown Collection और (3)Pickford Collection. मैकेन्जी और ब्राउन कलेक्शन 1870में प्रेसिडेन्सी कॉलेज, मद्रास को स्थानान्तरित किया गया और Mr. Pickford जो प्रेसिडेंसी कॉलेज में संस्कृत के प्रोफेसर थे, को इन पाण्डुलिपियों का कैटलॉग तैयार करने का निर्देश दिया गया. साथ ही, इन्हें प्रमुख ऐतिहासिक पाण्डुलिपियों के प्रकाशन की योजना बनाने का भी निर्देश दिया गया. 1876 में उन्हें प्रतिलिपि तैयार कराने का निवेदन किया गया. इस प्रकार, असंख्य पाण्डुलिपियाँ एकत्र हो गईं तथा वे सुरक्षित भी हो गईं. यहाँ कुल 71,180 प्रतियाँ हैं -

तेलुगू	-	2,150
संस्कृत	-	48,884
तमिल	-	16,398
कन्नड़	-	250
मराठी	-	956
उर्दू	-	184
अरबी	-	407
फारसी	-	1390
अन्य प्राच्य भाषाएँ	-	127
स्थानीय	-	434
कुल	-	71,180

लगभग 7000 पाण्डुलिपियों (तेलुगू, कन्नड़, मलयालम) को आँध्र प्रदेश और केरल राज्य की स्थापना के बाद भेज दिया गया. इसके अतिरिक्त 22,188 प्रकाशित ग्रन्थ पुस्तकालय में संग्रहीत हैं.Govt. Oriental Manuscripts series और Govt. Oriental Series के अन्तर्गत महत्वपूर्ण प्रकाशन-कार्य किए जाते हैं. पाण्डुलिपियों की प्रदर्शनी लगाई जाती है. संगोष्ठियों का आयोजन भी होता है. शोधार्थियों हेतु अध्ययन एवं छायाप्रति की सुविधा है. इन पाण्डुलिपियों और ग्रन्थों के संरक्षण हेतु हर सम्भव प्रयत्न किया जाता है. यह संस्थान तमिलनाडु सरकार द्वारा संचालित होता है. यहाँ विभिन्न भाषाओं में 50,580 तड़ि पत्र और 22,134 कागज की पाण्डुलिपियाँ तो 25,373 सन्दर्भ पुस्तकें हैं.

तंजौर पैलेस लाइब्रेरी, **तंजौर:**

तंजौर पैलेस लाइब्रेरी एशिया की प्राचीनतम पुस्तकालयों में से एक है जिसे 'सरस्वती महल लाइब्रेरी'भी कहा जाता है. यह तंजौर पैलेस के परिसर में ही अवस्थित है. इसका आदि नाम 'तंजावुर महाराजा शेरोफजी सरस्वती महल' था. इस तंजावुर नरेश शेरोफजी का काल 1535-1675 था, जो मराठा शासक थे.1675में इसे स्थानीय संस्कृति का संरक्षण मिला.1855 तक इसका 'रायल पैलेस लाइब्रेरी' के रूप में विकास हो गया था. शासक शेरोफ जी द्वितीय (1798-1832)शिक्षा और कला के विद्वान् थे. महाराजा के सम्मान में ही इस पुस्तकालय का नामकरण हुआ. इस पुस्तकालय में तड़ि-पत्र तथा कागज के तमिल, हिन्दी, तेलुगू, मराठी और अन्य भारतीय भाषाओं की पाण्डुलिपियाँ हैं जिसके 60,000 से अधिक भाग हैं. पुस्तकालय अपनी कार्यशैली और क्रिया-कलापों को कम्प्यूटरीकृत कर चुका है. 39,300 पाण्डुलिपियाँ संस्कृत में हैं जिसकी लिपि देवनागरी, तेलुगू और तमिल है. ये साहित्य, संगीत और चिकित्सा

से संबंधित हैं. यहाँ 3,076 मराठी पाण्डुलिपियाँ हैं जो 17,18 एवं 19वीं शती की दक्षिण भारतीय महाराष्ट्र की हैं. मराठी पाण्डुलिपियाँ अधिकांशतः कागज पर हैं, कुछ तड़ि-पत्र पर हैं भी तो तेलुगू लिपि में हैं.846 तेलुगू पाण्डुलिपियाँ ताड़-पत्र पर हैं. 22 उर्दू एवं फारसी हैं जिनमें अधिकांशतः 19वीं शताब्दी की ही हैं. पुस्तकालय के धन्वन्तरि अनुभाग में आयुर्वेदाचार्यों के चिकित्सकीय रिकाडर्स पेसेन्ट-केस-अध्ययन के साथ उपलब्ध हैं. पुस्तकालय में 1342 बंडल मराठा राज के रिकाडर्स भी सुरक्षित हैं. ये मराठी भाषा के राज रिकाडर्स मोदी लिपि जो प्रथम देवनागरी लिपि है, में लिखित थे. इस संग्रहालय में प्राचीन पाण्डुलिपियाँ, सचित्र पाण्डुलिपियाँ, ओरिजिनल ड्राइन्स की प्रिन्टेड प्रतियाँ, काष्ठ चित्रकारी, शीशा चित्रकारी तंजावुर मराठा शासकों के पोर्टेट्स एवं चार्ल्स ली-ब्रून का Physiognomy (मुखाकृति) चाटर्स भी संग्रहीत हैं. मद्रास सरकार ने 1918 में ही इस पुस्तकालय को सार्वजनिक रूप दे दिया था.

ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, मैसूर:

ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट आरंभ में ओरिएन्टल लाइब्रेरी के रूप में जाना जाता था. यह एक राष्ट्रीय पुस्तकालय है जो संस्कृत (देवनागरी), कन्नड़ (ब्राह्मी), नंदनागरी आदि लिपियों में लिखित पाण्डुलिपियों को संग्रहीत कर प्रकाशित भी करता है. इस पुस्तकालय का आरम्भ 1891 में हुआ था जब चामराजेन्द्र वाडियार (10) वहाँ के शासक थे.1916 से पूर्व यह शिक्षा विभाग का हिस्सा था, 1916 से यह मैसूर विश्वविद्यालय से जुड़ गया.1943 में यह ओरिएन्टल लाइब्रेरी 'ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट' बन गया. इस ओरिएन्टल लाइब्रेरी के उद्घाटन से प्रेरित होकर ही महाराज सयाजीराव गायकवाड़ (III) ने 1893 में महाराजा सयाजीराव ओरिएन्टल इन्स्टीच्यूट की परिकल्पना की थी. प्रतिष्ठान द्वारा अद्यतन दो सौ से अधिक ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं.'रामायण' और 'महाभारत' के महत्त्वपूर्ण संस्करण यहाँ उपलब्ध हैं. सबसे प्रसिद्ध प्रकाशन 'कौटिल्य का अर्थशास्त्र' है जो ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में लिखा गया था और जिसका सम्पादन डॉ. रूद्रपट्टनम् शाम शास्त्री ने किया था.1909 में इस पुस्तक के प्रकाशन से इस प्रतिष्ठान को विश्वप्रसिद्ध ख्याति मिली. इस प्रतिष्ठान में 45,000 से अधिक ताड़ के पत्रों की पाण्डुलिपियाँ हैं. पारंपरिक विधि द्वारा पाण्डुलिपियों की माइक्रोफिल्म बनाकर संरक्षित किया जाता है. संस्थान ने इन फिल्मों को डिजिटल कर दिया है जिससे उन्हें कम्प्यूटर पर देखा -पढ़ा जा सकता है.1954 में पाण्डुलिपियों के संरक्षण के लिए 'माइक्रोफिल्म विभाग'यहाँ आरम्भ किया गया था. संस्कृत और कन्नड़ में 7000 से अधिक संग्रह है.'द मैसूर ओरिएन्टलिस्ट' नामक शोध-पत्रिका भी प्रकाशित होती है जिसके 18 अंक प्रकाशित हो चुके हैं. इस संस्थान का एक पुस्तकालय भी है जहाँ 40,000 से अधिक पुस्तकें उपलब्ध हैं.

भंडारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पुणे:

भंडारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पुणे स्थित संस्थान है जो भारतीय प्राच्य विद्या वैज्ञानिक रामकृष्ण गोपाल भंडारकर (1837-1925) की स्मृति में 6 जुलाई 1917 में स्थापित की गई. यह एक सार्वजनिक संगठन है जिसका संचालन एक सार्वजनिक ट्रस्ट के अधीन होता है. इसको भारत सरकार और यूजीसी द्वारा अनुदान भी प्राप्त

हुआ है. इस संस्थान के पास 1,40,000 दुर्लभ पुस्तकें और 28,000 से अधिक पाण्डुलिपियों का संरक्षण प्राप्त है. इसमें संस्कृत, प्राकृत, भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं, शास्त्रीय एशियन और यूरोपीय भाषाओं और लिपियों को समेटा गया है. यह संस्थान सम्मेलन,संगोष्ठियाँ एवं व्याख्यान भी आयोजित करता है. अपनी विभिन्न परियोजनाओं के द्वारा सन्दर्भ अभिलेखागार का बहुमूल्य निर्माण किया है. संस्थान द्वारा वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन होता है जिसका नाम है 'एनल्स ऑफ द भंडारकर ओरिएन्टल रिसर्च इंस्टीच्यूट'. प्रकाशन के क्षेत्र में इस इन्स्टीच्यूट ने सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रकाशन किया है-महाभारत का महत्वपूर्ण संस्करण (इस महाकाव्य के क्रिटिकल एडिशन को 1259 पांडुलिपियों से संकलित किया गया. इस संस्करण में 19 खण्डों में महाभारत के 18 पर्वों का समालोचनात्मक पाठ उपलब्ध है जिनमें 89000 से अधिक छन्द हैं. इसके बाद 'हरिवंश'का महत्त्वपूर्ण संस्करण भी तैयार किया गया है.) पाण्डुलिपियों का वर्णनात्मक कैटलॉग, प्राकृत शब्दकोश आदि. यह आज इंडोलॉजिकल स्टडी एण्ड रिसर्च के बहुत बड़े केन्द्र की भूमिका में अग्रणी है. संस्थान के पास पुस्तकालय के अतिरिक्त वाचनालय और एक अतिथि भवन भी है. इस शोध संस्थान के चार मुख्य विभाग हैं- (1)हस्तलिखित ग्रंथ विभाग (2)प्रकाशन विभाग, (3)शोध विभाग और (4)महाभारत विभाग.

खुदाबक्श ओरिएन्टल पब्लिक लाइब्रेरी, **पटना -**

यह खुदाबक्श ओरिएन्टल लाइब्रेरी बिहार राज्य की राजधानी पटना में अवस्थित है. बिहार के छपरा निवासी मौलवी मुहम्मद बक्श खान के द्वारा पुस्तकों के दान स्वरूप आरंभ यह पुस्तकालय संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा संचालित है. वे इतिहास के विद्वान् और पुस्तक प्रेमी थे. उनके व्यक्तिगत पुस्तकालय में लगभग चौदह सौ पाण्डुलिपियाँ और दुर्लभ पुस्तकें थीं. मुहम्मद बक्श ने 1876 में, जब वे मृत्युशय्या पर थे, अपने पुत्र खुदाबक्श से एक पुस्तकालय स्थापित करने की इच्छा प्रकट की. तदनुरूप मौलवी खुदा बक्श ने इस ओर कदम बढ़ाया और अपने पिता से प्राप्त पाण्डुलिपियों, पुस्तकों के अतिरिक्त और अधिक पुस्तकों का संग्रह कर 1888 में लगभग अस्सी हजार की लागत से दो मंजिले भवन में पुस्तकालय का आरंभ किया. तब इस पुस्तकालय में चार हजार पाण्डुलिपियाँ थीं जो अरबी, फारसी और अंग्रेजी में थीं जिनमें 'कुरआन'की प्राचीन और हिरण की खाल पर लिखी प्रतियाँ भी अद्यतन उपलब्ध हैं. इस पुस्तकालय का उद्घाटन 1891 में बंगाल के सर चार्ल्स इलियट के लेफ्टिनेंट गवर्नर ने किया था. यहाँ भारत के राजपूत और मुगल काल की पेंटिंग्स भी सुरक्षित हैं. आज अरबी, फारसी, उर्दू, तुर्की और पश्तो भाषाओं की 21,136 पाण्डुलिपियाँ पुस्तकालय में हैं. पटना स्थित खुदाबक्श ओरिएन्टल पब्लिक लाइब्रेरी इस्तांबुल सार्वजनिक ग्रन्थालय (तुर्की) के बाद दुनिया का सबसे बड़ा ग्रन्थालय माना गया है. खुदाबक्श (2 अगस्त 1842-3 अगस्त 1908) एक वकील थे जो 1895 में हैदराबाद के निजाम के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश भी रहे. अन्त में,वे पुनः पटना लौट आए थे और पक्षाघात के कारण पीड़ितावस्था में स्वयं को पुस्तकालय तक ही सीमित कर लिया था.

इसके ऐतिहासिक महत्व एवं संग्रह को देखते हुए भारत सरकार ने 1969 में एक संसद अधिनियम के द्वारा इसे राष्ट्रीय महत्व का संस्थान घोषित किया. स्वायत्त संस्थान के रूप में स्थापित यह पुस्तकालय संस्कृति मंत्रालय द्वारा पूर्णतः वित्तपोषित है.

आनन्द आश्रम संस्कृत ग्रन्थावली (आनन्द आश्रम संस्कृत सीरीज), पुणे:

आनन्द आश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, पुणे 1888 से 1942 तक प्रकाशित संस्कृत ग्रन्थों का संग्रह स्थल है. यहाँ वेद संहिता, आरण्यक, ब्राह्मण, उपनिषद्, श्रौत सूत्र, ग्राह्य सूत्र, मीमांसा, पुराण, काव्य, व्याकरण आदि की 144 ग्रन्थों का प्रकाशन इस श्रृंखला के अन्तर्गत हुआ है. चार मराठी ग्रन्थ भी प्रकाशित हैं. इन सभी ग्रन्थों की पीडीएफ फाइलों को भी सूचीबद्ध किया जा चुका है. आनन्दाश्रम की स्थापना 1887 में महादेव चिमन जी आप्टे (1845-1895)ने पारंपरिक शिक्षा के संरक्षण और संवर्द्धन के लिए किया था.19वीं शताब्दी के अंतिम वर्षों से इसने प्रकाशन कार्य आरम्भ किया है.

मिथिला संस्कृत स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध संस्थान, दरभंगा:

मिथिला संस्कृत स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध संस्थान, दरभंगा की स्थापना16 जून 1951 को हुई थी जब दरभंगा महाराज ने 32 एकड़ जमीन दान-स्वरूप इस संस्थान को दी थी. इसके मुख्य भवन का शिलान्यास 21 नवम्बर 1951को प्रथम राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने किया था. यहाँ संस्कृत और पाली भाषाओं में न्यायशास्त्र और धर्मशास्त्र सहित असंख्य विषयों की भोज-पत्र और ताड़-पत्र की दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ हैं. यहाँ विश्व भर के शोधार्थी अध्ययन हेतु आते रहे हैं. संस्कृत के अध्ययन - अध्यापन से शोध को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से इस संस्थान की स्थापना की गई थी. यहाँ लगभग 12,000 दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ हैं.9वीं से 18वीं शती के विद्वानों की पाण्डुलिपियाँ हैं. इस संस्थान द्वारा एक शोध-पत्रिका का भी प्रकाशन होता है तथा निरन्त संगोष्ठियों एवं व्याख्यानों का आयोजन होता है.

मिथिला स्नातकोत्तर अध्ययन एवं शोध संस्थान, दरभंगा में पाण्डुलिपियों के संरक्षण का कार्य 7 फरवरी 2022 से आरम्भ हुआ है. इन्टैक द्वारा इस वित्तीय वर्ष में मिथिला की पांडुलिपियों के संरक्षण पर कुल 15 लाख रुपये खर्च किए जा रहे हैं. जर्मनी से आयातित टिस्सू पेपर का उपयोग हो रहा है जिससे संरक्षण की गुणवत्ता बरकरार रहे.[5]

राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन :

पर्यटन एवं संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार ने **7** फरवरी **2003** को राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन (National Manuscript Mission- (NAMAMI) की स्थापना की. इस परियोजना की अवधि पाँच वर्ष है. इस मिशन का उद्देश्य भारत की विशाल पाण्डुलिपि सम्पदा को खोजना और उसे संरक्षित करना है. विश्व की पाण्डुलिपियों की सबसे बड़ी संख्या भारत में है, जो विभिन्न भाषाओं, लिपियों एवं विषयों में हैं. यह मिशन उसे सुरक्षित कर जनता के लिए सुलभ

बनाने के उद्देश्य से बना है. इस मिशन के द्वारा 'कृतिरक्षा' नामक पत्रिका का प्रकाशन भी होता है. इसने National Database of Manuscripts का डिजिटल संग्रह 'कृति सम्पदा' की भी स्थापना अपने वेबसाइट पर की है. मिशन भारत भर में 32संरक्षण इकाइयों का 'पाण्डुलिपि संरक्षण केन्द्र' (MCC) नामक एक नेटवर्क चलाता है जो देश के भौगोलिक क्षेत्रों में बँटा हुआ है.

प्राचीन प्रमुख संगीत ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ एवं उनके प्रमुख प्राप्ति-स्थान[6]:

वेद	28000 पाण्डुलिपियाँ	–भंडारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, मैसूर
भरत	नाट्यशास्त्र	–गायकवाड़ ओरिएन्टल सीरीज, बड़ौदा
नारद	नारदीय शिक्षा (प्रतिलिपि)	–भण्डारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पूना, सं0 3/1874–74 –एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बाम्बे, सं0 BD86 –एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बाम्बे, सं0 DB78 –ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, मैसूर –ओरएिन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, बड़ौदा
नारद	संगीत मकरन्द (प्रतिलिपि)	–श्रीमन्महागणपतिदास कृष्णाजीदत्त, विद्यापुर, 1944AD (तन्जौर ग्रन्थालय की प्रतिलिपि पर 1650 AD अंकित है)
	सम्पादन	–श्रीमंगेशरामकृष्ण तेलंग, बड़ौदा
नारद	पंचमसारसंहिता	–वंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता(1778 A) –एशियाटिक सोसाइटी, बंगाल(1440AD)
नारद	राग सागर	–मद्रास ओरिएन्टल लाइब्रेरी, मद्रास
नारद	चत्वारिंशत्रागनिरूपणम् (पाण्डुलिपि)	–तंजौर पैलेस लाइब्रेरी, सं0 665 (पर यहाँ मात्र 'रागनिरूपण' शीर्षक है) (तंजौर महाराजा सरफोजी सरस्वती महल पुस्तकालय)
दत्तिल	दत्तिलम्	–त्रिवेन्द्रम् संस्कृत सीरीज, 1930 (के0 साम्ब शिव शास्त्री)
सोमेश्वर	मानसोल्लास	–गायकवाड़ ओरिएन्टल सीरीज, बड़ौदा
जगदेकमल्ल	संगीत चूड़ामणि (पाण्डुलिपि)	–प्राच्य विद्या मन्दिर, सं0 9892
	प्रकाशक	–गायकवाड़ ओरिएन्टल सीरीज, बड़ौदा सं0 – CXXVII
नान्यदेव	भरतभाष्यम्	– भण्डारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पूना,

Vol. 11, Issue-2 (July 2022) pp. 171-188 Sangeet Galaxy e-Journal [ISSN: 2319-9695]

UGC-CARE enlisted & Indexed in the EBSCO International Database of Journals

	(पाण्डुलिपि)	(7000 श्लोक परन्तु खंडित)
	प्रकाशक	–इ0 क0 सं0 वि0 वि0, खैरागढ़
	सम्पादक	–चैतन्य देसाई
शांरगदेव	संगीत रत्नाकर	–आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली, सं0 – 35, 1942
पार्श्वदेव	संगीतसमयसार	–त्रिवेन्द्रम् संस्कृत सीरीज, त्रिवेन्द्रम्
सुधाकलश	संगीतोनिषत्सारोद्धार	–श्री आत्माजीराम जैन ज्ञान मन्दिर, बड़ौदा सं0 1, 1953 –श्री आत्माजीराम जैन ज्ञान मन्दिर, बड़ौदा सं0 2, 1442 –भारतीय संस्कृत मन्दिर, अहमदाबाद सं0 3,1918 –ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, बड़ौदा सं0 4550
महाराणा कुम्भा	संगीत राज (प्रतिलिपि)	–राजस्थान प्राच्य विद्या संस्थान, जोधपुर, सं0 1805 –बीकानेर महाराजा की अनूप संस्कृत पुस्तकालय, बीकानेर –नेपाल राज्य संस्कृत ग्रन्थमाला – 5 –भंडारकर ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, पूना, सं0 365 –राजस्थान पुरातत्व ग्रन्थमाला, सं0 90 –ओरिएन्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, बड़ौदा सं0 9932 –गायकवाड़ प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बड़ौदा, सं0 9931

UGC-CARE enlisted & Indexed in the EBSCO International Database of Journals

रामामात्य	स्वरमेलकलानिधि	–केन्द्रीय पुस्तकालय, बड़ौदा
क्षेमकर्ण	रागमाला (पाण्डुलिपि)	– राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में दो हस्तलिखित प्रति –बंगलोर के न्यायमूर्ति श्री रामकोटे के पास एक छायाप्रति (इन तीनों पाण्डुलिपियों की छायाप्रतियाँ भी राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में उपलब्ध) –रमा गुप्त द्वारा संपादित राजस्थान संस्कृत अकादमी जयपुर द्वारा प्रकाशित
दामोदर पंडित	संगीत दर्पण (प्रतिलिपि)	–पैलेस लाइब्रेरी, बीकानेर
अहोबल	संगीत पारिजात	–फारसी अनुवाद (पं० दीनानाथ) 1724 –पुणे में राव जी श्रीघर गोन्धलेकर के पास प्रतिलिपि
लोचन	राग तरंगिणी (हस्तलिखित प्रति)	–पं० दत्तात्रय केशव जोशी, पूना को प्राप्त हुई थी
श्रीनिवास	रागतत्त्वविबोध (पाण्डुलिपि) (प्रतिलिपि)	–बीकानेर महाराज पुस्तकालय –प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बड़ौदा, सं० 10818
हृदयनारायण	हृदयकौतुक	–हस्तलिखित लिपि की टंकित प्रति – –महाराजा

	एवं हृदयप्रकाश	बीकानेर का अनूप संस्कृत पुस्तकालय, सं0 356
व्यंकटमखी	चतुर्दण्डीप्रकाशिका	प्राप्त होने पर आर्यभूषण मुद्रणालय, बॉबे द्वारा प्रकाशित, 1918
पुण्डरीक विट्ठल	सद्राग चन्द्रोदय नर्तन निर्णय रागमाला रागमंजरी	–मूल पाठ भूमिका सहित प्रकाशन –राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
ज्योतिरीश्वर	वर्णरत्नाकर (तिरहुताक्षर पाण्डुलिपि तड़ि–पत्र)	–बंगाल एशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता, सं0 48/31
विद्यापति	विद्यापतिको गीत (तिरहुताक्षर लिपि)	–नेपाल राजदरबार पुस्तकालय

ओरिएण्टल इन्स्टीट्यूट ऑफ बड़ौदा में निम्नलिखित ग्रन्थों के Accession No.[9]

खण्ड-II

संगीत चूड़ामणि (कवि चक्रवर्ती)	-	9892
संगीत दर्पणम् (दामोदर)	-	1631, 11515, 12874
संगीत पारिजातः (अहोबल)	-	13006
संगीत मरकन्दः (नारद)	-	11228
संगीत सारोद्वार (सुधाकलश)	-	13271
सद्रागचन्द्रोदयः (पुण्डरीकविट्ठल)	-	11098, 4554
स्वरमेलकलानिधि (रामामात्य)	-	4551
मानसोल्लास (सोमेश्वर)	-	11852, 13179, 13180, 13294

खण्ड-IV

रागनाम **(**ज्ञात नहीं हो सका)	-	20706
रागमाला (आनन्दधन)	-	20064
रागमाला (रागाध्याय)- हरिवल्लभ	-	20065
रागमाला (सप्तस्वररूप)	-	20066
रागव्याख्या (आनन्दधन)	-	20067
सभाभूषण रागमाला (गंगाराम)	-	20241
मानसोल्लास (सोमेश्वर)	-	20459
मानसोल्लास (सोमेश्वर) द्वितीय खण्ड	-	20461

ऐतिहासिक विभिन्न कालखण्डों में भारतीय संगीत के अनेक बहुमूल्य ग्रन्थों की रचनाएँ हुईं. अत्यधिक प्राचीनता के कारण इनमें से अनेक ग्रन्थ अनुपलब्ध हैं, लुप्तप्राय हैं तो अनेक खण्डितावस्था में है. कहीं ग्रन्थ हैं तो ग्रन्थकार ज्ञात नहीं, कहीं किसी ग्रन्थकार के किसी ग्रन्थ का उल्लेख मात्र तो मिलता है परन्तु पूर्ण ग्रन्थ नहीं. ग्रन्थ और ग्रन्थकार यदि ज्ञात हैं भी तो उनका देश-काल आदि निर्धारण नहीं हो पाता. तब ये ग्रन्थ मशीनों द्वारा प्रकाशित न होकर, अनेक प्रकार के पत्रों पर अंकित वा लिखित थे. यद्यपि इनमें से अनेक पाण्डुलिपियों अथवा हस्तलिखित प्रतियों का आज ग्रन्थों के रूप में प्रकाशन हुआ है, तथापि अद्यतन अधिकांश ग्रन्थ अप्रकाशित ही हैं. देश के अनेक प्राच्य विद्या प्रतिष्ठानों ने इन ग्रन्थों के संरक्षण के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान दिया है जिससे जिज्ञासुओं को निरन्तर और चिरन्तन लाभ हो रहा है. इसमें बहुत अधिक तीव्रता लाने में अनेक व्यवधान भी हैं, यथा- पाण्डुलिपियों की जर्जर अवस्था, इनके अध्ययन- सम्पादन की प्रामाणिकता, मूल-पाठ का यथावत् संरक्षण, खण्डितावस्था के कारण पाठ-शुद्धि की सक्षम व्यवस्था, जर्जरता की स्थिति में निर्णायक संशोधन आदि.

आज के तकनीकी युग में सुविधाएँ अनन्त हैं. उपर्युक्त अनेक प्रतिष्ठानों ने अनेक ग्रन्थों का डिजिटलाइजेशन कर लिया है और आगे भी यह क्रम जारी ही है. कहीं-कहीं डिजिटलाइज्ड अध्ययन सामग्रियों की एक स्वतन्त्र शाखा ही सुनिश्चित कर दी गई है. नित नई जानकारियाँ प्राप्त हो रही हैं. अनेक अध्येताओं की मदद से इन प्रतिष्ठानों में निरन्तर उच्च स्तरीय कार्य सम्पादित हो रहे हैं, कार्यान्वित हो रहे हैं. ऐतिहासिक तथ्यात्मक विवरणी और ग्रन्थगत तत्त्वों के सूक्ष्म विश्लेषण के लिए अधिकाधिक अध्ययन/विश्लेषण की आवश्यकता होती ही है. आज हम प्राचीन ग्रन्थों के अध्ययन-दर्शन के उपरान्त ही यह सुनिश्चित निर्धारित कर पाए हैं कि पुस्तक और पुस्तककार के नाम के अतिरिक्त पुस्तक-परिचय, पुस्तककार-परिचय, प्रकाशन-वर्ष, प्रकाशक का नाम व पता, पृष्ठ संख्या आदि सुस्पष्ट और मुख्य रूप से अंकित होना आवश्यक है ताकि कोई भ्रामक स्थिति उत्पन्न न हो सके. इनके अभाव में हम कई प्राचीन ग्रन्थों के

अनेक तथ्यों का अद्यतन निष्पादन नहीं कर पाए हैं. सन्तोषप्रद बात है कि इन प्रतिष्ठानों द्वारा निरन्तर सुघड़ प्रयत्न किए जा रहे हैं और हम सुस्पष्ट अध्ययन-अन्वेषण करने में उद्दत और सफल भी हो रहे हैं.

ऐसी ही जिज्ञासा और कुतूहलवश अनेक ग्रन्थों के गूढ़ तथा सघन अध्ययन में रुचि के उपरान्त, समान्यतया अप्रचलित ग्रन्थों की अनुपलब्धता ने, इन प्रतिष्ठानों की ओर बढ़ने का अवसर दिलाया और, निश्चित ही, उत्कंठा बढ़ती गई, बढ़ती ही चली गई... इतना कुछ है, बहुत कुछ किया जा सकता है, अनन्त किया जाना शेष है. लम्बी अवधि का कार्य है, बहुकुशलता अपेक्षित है, दीर्घ मन्थन के बाद कुछ सुदीर्घ परिणाम आएँगे. इन प्रतिष्ठानों द्वारा किए गए कार्य और ग्रन्थ-प्रकाशन, यथासम्भव उपलब्धता-योग्य पाण्डुलिपियों-हस्तलिपियों के अध्ययन के उपरान्त किया गया अध्ययन, अन्वेषण, गवेषण वा शोध-कार्य ही प्रामाणिक बनेगा. अपार भण्डार है, असीमित सम्भावनाएँ हैं यहाँ. आवश्यकता है इस ओर उन्मुख होने की. एन-केन-प्रकारेण को महत्त्व न देते हुए अपने विशाल सांस्कृतिक परिदृश्य पर गौर करेंगे तो गौरवान्वित भी होंगे हम. अस्तु !

संदर्भ :

1. वडनेरकर, अजीत, पाण्डुलिपि से गुम हस्तलेख (हिन्दी), शब्दों का सफर, अधिगमन तिथि : 23 अप्रैल 2013
2. वही, दिसम्बर 30, 2011
3. लेखिका द्वारा यथास्थान भ्रमण द्वारा संग्रहीत
4. Oct. 6, 2010, Times of India
5. 8 फरवरी 2022, प्रभात खबर, पृ.- 4
6. काव्या, लावण्य कीर्ति सिंह, भारतीय संगीत ग्रन्थ, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, पृ.- 314-319
7. लेखिका के पास उपलब्ध
8. लेखिका के पास उपलब्ध
9. लेखिका द्वारा ओरिएण्टल इन्स्टीट्यूट ऑफ बड़ौदा भ्रमण द्वारा संग्रहीत